Agricultural Science in Vedic and Secular Sanskrit Literature: Current Relevance

(वैदिक एवं लौकिक संस्कृत साहित्य में कृषि विज्ञान: वर्तमान में प्रासंगिकता)

Dr. Suman Rani

Assistant professor, Haryana Central University

DOI: 10.52984/yogarima1201

वैदिक साहित्य समस्त ज्ञान का मूल है। ज्ञान के बिना कुछ भी करना असंभव हैं । समस्त ज्ञान-विज्ञान जैसे- रसायन विज्ञान, जीव-विज्ञान, भौतिकी विज्ञान, भौगोलिक विज्ञान, कृषि विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान इत्यादि सभी प्रकार के विज्ञान, वैदिक साहित्य की ही देन है । इन सभी विज्ञानों के आधार पर ही व्यक्ति दिन- दुगनी रात- चौगुनी उन्नति करता जा रहा हैं । परन्तु शोध पत्र में यहाँ पर कृषि विज्ञान के बारे में कुछ दिग्दर्शन कराने की चेष्टा की गई हैं क्योंकि यह विषय इतना विस्तृत हैं कि शोध पत्र में सम्पूर्ण नहीं हो सकता । इसलिए कुछ महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं पर चर्चा करने का मैं प्रयास करुँगी।

भारत एक कृषि प्रधान देश हैं । प्राचीन संस्कृतियाँ भी कृषि कार्य पर ही ज्यादातर निर्भर रही हैं । हमारे देश की GDP में भी कृषि की हिस्सेदारी सबसे ज्यादा हैं अर्थात् देश की ज्यादातर आबादी कृषि कार्यों में संलग्न हैं ।अत: इस कार्य को भली-भांति करने के लिए कृषि विज्ञान का ज्ञान होना अनिवार्य है ।

कृषि विज्ञान :-

कृषि विज्ञान दो शब्दों से मिलकर बना है । एक कृषि व दूसरा विज्ञान अर्थात् अर्थ हुआ कृषि का विज्ञान । कृषि शब्द-कृष् धातु सेक्तिन्, विज्ञान वि उपसर्ग, ज्ञा-प्रापणे धातु से ल्युट् ।

किसी भी देश की अर्थव्यवस्था को प्रगति के पथ पर लाकर विकसित अर्थव्यवस्था बनाने की दिशा में उस देश की कृषि और खनिज संपदा का विशेष महत्तवपूर्ण स्थान होता है । कृषि व खनिज संपदा के बल पर ही देश आत्मनिर्भर बन सकता हैं । अभी भारत में भी पिछले कुछ वर्षों से इसी दिशा में बहुत महत्त्वपूर्ण फैसले किए हैं व देश को आत्मनिर्भर बनाने का संकल्प भी लिया है ।

कृषि कार्य:-

वैदिक आर्यों का मुख्य व्यवसाय कृषि था ।ऋग्वेद में उल्लेखित 'कृष्टि' शब्द से हमें बोध होता कि सभी आर्य जन कृषक थे ।[1]तात्कालिक समाज में कृषि कार्य करना

श्रेष्ठ कार्य माना जाता था। सभी लोग पृथ्वी को माता समझते थे । हमें अथर्ववेद के भूमि सूक्त से प्रमाण मिलता है किभूमि को माता तथा पर्जन्य को पिता कहा गया हैं ।ऋग्वेद में कृषि-कर्म व उसकेउपकृत्यों का उल्लेख अनेक स्थलों पर मिलता हैं । कृषि जल पर निर्भर करती हैं तात्कालिक समाज में कृषि के लिए जल की व्यवस्था भी प्राकृतिक संसाधनों के माध्यम से ही होती थी । कृषि के लिएवर्षा को आधार माना जाता था । वर्षा के देवता इंद्र माने गये हैं । इसलिए हमें ऋग्वेद में इंद्र की स्तुति लगभग 250 सूक्तों में मिलती हैं । इससे यह भी पता चलता है कि तात्कालिक समाज भी कृषि प्रधान था ।

अथर्ववेद के एक मन्त्र में कहा गया हैं कि पृथ्वी (पृथु) वैन्य ने सबसे पहले मनुष्यों के लिए कृषि कृषिकर्म के द्वारा फसल उत्पन्न की । उन्होंने ही मानव जाति के लिए कृषि की पद्धति प्रशस्त की --

तांपृथीवैन्योधोक्तांकृषिं च सस्यंचाधोक्।तेकृषिं च सस्यं च मनुष्याउपजीवन्तिकृष्टराधिरुजीवनीयोभवति य एवं वेद ।[3]

ऋग्वेद के अनुसार-अश्विन युग्म ने मनु को बीज बोने की कला सिखाई तथा आर्यों को हल की सहायता से कृषि-कर्म सिखलाया ।[4]

वैदिक जन-जीवन कृषि पर ही निर्भर होने के कारण वैदिक साहित्य में पृथ्वी के प्रति बड़े ही श्रध्दाभाव से उद्गार प्रकट किए गए हैं ।अथर्ववेद में उल्लेख मिलता हैं कि-

यत्तेमध्यंपृथिवियच्चनभ्यंयास्तउर्जस्तन्वःसंबभूवु: ।
तासुनोधेह्यभि न: पवस्व माता भूमि: पुत्रो अहं पृथिव्या: ।
पर्जन्य: पिता स उ न: पिपर्तु।।[5]

अर्थात् हे पृथ्वी माता ! आप के मध्य भाग नाभिस्थान में जो सम्पदाएँ हैं और आपके शरीर से जो पोषक पदार्थ प्रादुर्भत होते हैं, उनमें हमें प्रतिष्ठित करें और हमें पवित्रता प्रदान करें । यह धरती हमारी माता हैं और हम सब उसके पुत्र हैं ।पर्जन्य (मेघ) हमारे पिता हैं, वे हमें पोषण दें ।

इससे हमें पता चलता हैं कि कृषि का मुख्य आधार पानी हैं उसके लिए पानी की व्यवस्था वर्षा के माध्यम से होती है । उस वर्षा का आधार मेघ माना जाता हैं । मेघ को पिता का दर्जा दिया जाता हैं । वर्षा के बारें में भी कहा गया हैं कि-

आशामाशांविद्योततांवातावान्तुदिशोदिश: ।
मरुद्भि: प्रच्युतामेघा: संयन्तुपृथिवीमनु।।
उपप्रवदमण्डूकिवर्षमावदतादुरि।
मध्येह्रदस्यप्लवस्वविगृह्य चतुर: पद: ।।[6]

अर्थात् दिशाओं में बिजलियाँ चमकें और सभी दिशाओं में पवन प्रवाहित हो । वायु-प्रेरित मेघ धरती की ओर अनुकूलता से आगमन करें । हे मंडूकि ! वेगपूर्वक सहर्ष ध्वनीकरों। हे तादुरि (मेंढकी) वर्षा के जल को बुलाओं और ताल में चारों परों को फैलाकर तैरों।

कृषि कार्य श्रेष्ठ माना जाता था इसलिए इसके लिए लोगों को प्रेरित भी किया जाता था इसका प्रमाण हमें ऋग्वेद में मिलता हैं कृषिमित्कृषष्व।[7] कृषि करो या खेती करो इस तरह का अभियान चलाकर लोगों को

आत्मनिर्भर बनाने की बात वेदों में मिलती हैं । कृषि जीवन के प्रति प्रेम ने तात्कालिक समाज को आत्मनिर्भरता प्रदान की व दुर्व्यसनों में फँसे हुए लोगों को भी अच्छे कार्य में लगाते हुए सन्देश दिया कि जुआ न खेलों, खेती करों।[8]अगर हम आधुनिक सन्दर्भ में भी देखे तो प्राचीन ज्ञान के द्वारा हम भी वर्तमान की युवाओं की इच्छा सरकारी नौकरी पाने की है परन्तु सभी तो सरकारी नौकरी पा नहीं सकते हैं क्योंकि सरकारी नौकरी कम हैं और युवा ज्यादा हैं तथानौकरी न मिलने पर पथ भ्रष्ट हो रहें हैं तो उसी दिशा में इस तरह का कृषि-विज्ञान का ज्ञान उन्हें सन्मार्ग पर ला सकता है तथा समस्त बुराइयों से हटकर श्रेष्ठ कार्य (कृषि-कार्य) संलग्न कर सकता है । जिससे देश व समाज का आर्थिक विकास तो होगाही साथ में सभ्यता का भी विकास होगा ।

विभिन्न रूप:-

कृषि कैसी भूमि पर करनी चाहिए अर्थात् कृषि योग्य भूमि कौन सी होतीहैइसका ज्ञान कृषि कार्य करने से पूर्व हमें होना चाहिए । यदि ये ज्ञान न होगा तो हम समय व धन का व्यय व्यर्थ ही करेंगे । जितने अच्छे परिणाम हमें चाहिए वो मिलने मुश्किल हो सकते हैं ।अत: इस प्रकार का ज्ञान भी हमें वैदिक साहित्य में बहुत जगह से प्राप्त होता हैं ।ऋग्वेद (8/6/48) व अथर्ववेद (6.91.1) आदि अनेक स्थलों पर कृषि योग्य भूमि को उर्वरा या क्षेत्र का कहा गया हैं और उसमें खाद (शकन् या करिष) का उपयोग करने तथा सिंचाई की व्यवस्था का निर्देश किया गया हैं ।[9]

विभिन्न ऋतुओं में भिन्न-भिन्न प्रकार की फसल उगाई जा सकती हैं ।

इसका साक्ष्य भी हमें यजुर्वेद से प्राप्त होता है ।

यत्पुरुषेणहविषा देवा यज्ञमतन्वत।
वसन्तोअस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्म: शरद्धवि
:।।[10]

अर्थात् उस परमपुरुष को आधार बनाकर देवताओं ने मानस-यज्ञ को संपन्न किया और अपने संकल्पों से आगे की सृष्टि बनाई । उसमें बसंत ऋतु घृत, ग्रीष्म इंधन और शरद् ऋतु हवि हुई, अर्थात् ऋतुओं का निर्माण हुआ और उनसे सम्बंधितरचनाक्रम चला । इसका अभिप्राय यह हैं कि ऋतुओं के अनुसार बीजों का अंकुरण वर्तमान समय में भी देखा जा सकता हैं । वर्तमान में भी कृषक यदि ऋतु अनुसार व समयानुसार बीज का वपन करते हैं तो हम देखते हैं कि फसल अच्छी पैदावार देती हैं । वर्तमान में सामान्यतः फसल को दो प्रकार से बाँट सकते हैं ।

1. रबी की फसल - जो फसल नवम्बर-दिसम्बर में बोई जाती हैं तथा मार्च-अप्रैल में काट ली जाती हैं । जैसे- गेहूँ, जौं, चना, सरसो इत्यादि ।
2. खरीफ की फसल - जो फसल अप्रैल-मई में बोई जाती हैं तथा सितम्बर-अक्टूबर में काट ली जाती हैं । जैसे - कपास, चावल, ज्वार, बाजरा, ग्वार, इत्यादि ।

वैदिक ज्ञान के अनुसार कृषक फसल

उगाकर अपना व समाज के कल्याण के साथ-साथ आर्थिक लाभ भी प्राप्त कर सकता है। सामवेद में रमणीय ऋतुओं के बारे में वर्णन मिलता है कि

वसन्तइन्नुरन्त्यो ग्रीष्म इन्नुरन्त्य: ।
वर्षाण्यनुशरदोहेमन्त: शिशिर इन्नुरन्त्य: ।।[12]

वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त और शिशिर सभी ऋतुएँ अपने वैशिष्ट्य के कारण रमणीय होती हैं । इस प्रकार ऋतुओं का ज्ञान रखकर, किस-ऋतु में कौन-सी फसल या वनस्पति उगाई जायेगी तभी कृषि कार्य करना चाहिए । यही कृषक हित व राष्ट्र हित का कार्य हैं ।

फसल बौने से पहले कृषक धरती माता से प्रार्थना करते हुए सभी ऐश्वर्य की कामना भी करता हैं । जिसका वर्णन हमें अथर्ववेद में प्राप्त होता है -

जनंविभ्रती बहुधा
विवाचसंनानाधर्माणंपृथिवीयथौकसम्।
सहस्त्रं धारा
द्रविणस्यमेदुहांध्रुवेवधेनुरनपस्फुरंती।।[13]

अर्थात् विविध धार्मिक मान्यताओं वाले, विभिन्न भाषा- भाषी जनसमुह जनसमुदाय को एक परिवार के रूप में आश्रय देने वाली, स्थिर सवभाव वाली धरती दुग्ध वाली धेनु के समान असंख्य एश्वर्य दे ।वर्तमान में भी भारतीय संस्कृति में यही गुण से पहले धरती माता को नमस्कार करते हुए अपने इष्ट देवता को याद करता है तथा अच्छी फसल की कामना भी करता है । इससे आर्थिक पक्ष मजबूत तो होता ही है और साथ-साथ आध्यात्मिक पक्ष भी मजबूत बनता है ।

इस तरह से भारतीय कर्मशीलता की तरफ अग्रसर होते हैं जो कि भारतीय या वैदिक संस्कृति का मूल सिद्धांत ही है । इसके बारे में भी अथर्ववेद में कहा गया है कि

कृतंमेदक्षिणेहस्तेजयो में सव्यआहित: ।
गोजिद्भूयासमश्वजिद्धनञ्जयोहिरण्यजित्।।[14]

अर्थात् मेरे दाएँ हाथ में कर्म और बाएँ हाथ में विजय हैं । इन दोनों के द्वारा हम गौ, अश्व, धन, भूमि, एवं स्वर्ण आदि पाने में सफल हों ।

भूमि जाँच :-

वर्तमान में हम देखते हैं कि जिस भूमि पर कृषि कार्य या फसल ठीक से नहीं उगाई जा सकती है तो हम उस भूमि की मिट्टी की जाँच करवाते हैं कि यह भूमि किस प्रकार की फसल के लिए उपयोगी है तथा भूमि के प्रकार को समझकर फसल कार्य करने से हमें लाभ प्राप्त होता है । जिसका साक्ष्य हमें वैदिक साहित्य से प्राप्त होता है -

पूर्वंभूमिंपरीक्षेतपश्चात् वास्तु प्रकल्पयेत्।
वल्मीकेनसमायुक्ताभुमिरस्थिणैस्तु या ।।
वर्णगंधरसाकारादिशब्दस्पर्शनैरपि।
परीक्ष्यैवयथायोग्यंगृह्णीयाद्द्रव्यमुत्तमम्।[15]

First test the earth (site) the plan the construction. Land with anthills, skeletons, pits and craters should be avoided. After examining the colour, smell, taste, shape, sound and touch (of the soil) buy the best material as found suitable.

इस प्रकार से मिट्टी की जाँच करवाने से हमें

पता चल पाता है कि किस तरह से हम बंजर भूमि को उपजाऊ भूमि बना सकते हैं । देश में फ़िलहाल इस तरह के परीक्षण के माध्यम से काफी भूमि को ठीक किया जा रहा है और बेहतर परिणाम मिल रहे हैं ।

खेत की निराई-जुताई करना:-

इससे फसल अच्छी पैदा होती है, किसी भी प्रकार की फसल के लिए यह निराई-गुराई (खरपतवार को फसल से दूर करना) जरुरी है क्योंकि अनावश्यक पौधे फसल को बढ़ने नहीं देते है । इन्हीं अनावश्यक पौधे (खरपतवार) को हटाने के लिए तथा फसल की निराई की जाती है । तथा फसल बौने से पहले कृषि की पैदावार दोगुनी लेने के लिए खेत की अच्छी तरह से जुताई की जाती है । खेत को समतल किया जाता है । ताकि फसल अच्छी हो सके । इसके साक्ष्य हमें वैदिक साहित्य में प्राप्त है ।

निष्पन्नमपियद्धान्यं न कृतंतृणवर्जितम्।
न सम्यक् फलमाप्नोतितृणक्षीणाकृषिर्भवेत्।।[16]
कुलीरभाद्रयोर्मध्येयद्धान्यंनिस्तृणंभवेत्
तृणैरपितुसम्पूर्णम्तद्धान्यंद्विगुणंभवेत्।।[17]

यदि घास की निराई नहीं की गई तो अच्छी तरह से उगाई गई फसल का भी पूर्ण लाभ प्राप्त नहीं होता है अर्थात् अच्छी पैदावार नहीं होती हैं । श्रावण (अगस्त) और भाद्रपद (सितम्बर) में फसल के साथ अनावश्यक घास ज्यादा पैदा होती हैं, यदि उस घास को नहीं निकाला जाता है तो वह फसल नष्ट कर देती है।

वर्तमान में भी भारतीय कृषक इसी तरह से अपनी फसल की घास को नष्टा करते हैं तथा अच्छी फसल के लिए खेत की जुताई भी करते हैं । ऐसा करने से फसल की बेहतर पैदावार मिल सकती है ।

बीज संरक्षण एवं संग्रहण -

हमारे पूर्वजों से प्राप्त वैदिक ज्ञान को अपनाकर हम उन्नति के मार्ग में अग्रसित हो सकते हैं । भारत कृषि प्रधान देश है । हमारे पूर्वज कृषक ही थे । यदि हम उनके द्वारा प्रदत्त ज्ञान पर चलेंगे तो हम अच्छी फसल लेकर स्वयं का व राष्ट्र का हित कर सकते हैं ।कृषिपराशर में वर्णन मिलता है कि

माघे व फाल्गुनेमासिसर्वबीजानिसंहरेत्।
शोषयेदातपे सम्यक् नैवाधोविनिधापयेत्।।[18]

माघ (फरवरी) या फाल्गुन (मार्च) में सभी तरह के बीज खरीदने चाहिए, फिर इसे तेज आंच पर अर्थात् तेज धूप में अच्छी तरह से सुखाना चाहिए उसके बाद उस बीज का संग्रहण या बोना चाहिए । ऐसा करने से हमें अच्छी फसल मिलेगी । वर्तमान में कुछ लोग ऐसा करते भी हैं जिससे उनको लाभ मिलता है । अगर इस तरह से सोच- समझकर कृषि कार्य किया जायेगा तो निश्चित तौर से फसल की पैदावार बढ़ेगी व देश से बेरोजगारी जैसी समस्या भी ख़त्म होगी क्योंकि बेरोजगार युवाओं का रुझान कृषि कार्य के प्रति बढ़ेगा तो देश आत्मनिर्भर बनेगा ।

बीज रोपण का उत्तम समय-

अच्छी फसल के लिए कृषक को चाहिए कि समयानुसार ही बीज या फसल बोये । समय पर फसल उगाने पर हमें फसल की बेहतर पैदावार मिलती है । जैसे कि हम देखते भी हैं कि अगर गेंहूँ की फसल को नवम्बर-दिसम्बर

में बोया जाता है तो अच्छी फसल होती है । अगर गेंहूँ जनवरी-फरवरी में बोते हैं तो अच्छी फसल नहीं होती है । वैसे तो समय पर कार्य के महत्त्व से सम्पूर्ण सृष्टि परिचित भी है । इसके साक्ष्य भी हमारे शास्त्रों में मिले हैं ।

ततः प्रभूतोदकमल्पोदकंवासस्यंवापयेत्।
शालि-ब्रीहि-कोद्रव-तिल-प्रियङ्गुदारका-
वरका:पूर्ववापा: ।
मुग्द-माष-शैम्ब्या: मध्य्वापा: कुसुम्भ- मसूर-
कुलित्थ-यव-
गौधूम -कलायातसी- सर्षपाःपश्चाद्वापाः।।[19]

अर्थात् फसल को बोने के समय से पहले बीज को बहुत अधिक या कम पानी में उबलना या पानी में भिगोना चाहिए ताकि जल्दी से बीज अंकुरित हो सके । जैसे चावल, जई को अधिक जल में, प्रियंगु- द्वारका-वरकासबीजने से पहले भाप में मुद्रा- माशा-शाम्बस मध्य वाष्प में इस प्रकार से जल्दी अंकुरित करने के लिए किया जाता था । वर्तमान काल में भी हम भारतीय कृषि में देखते है कि कृषक ऐसे ही फसल बोने से पहले बीज को पानी मे भिगोते हैं ।

फसल की बुवाई का समय[20]	बीज का प्रकार
वर्षा ऋतु का प्रथम भाग	शाली, ब्रीहि, कोद्रवा, टीला, प्रियंगु, दारका, वरका
वर्षा ऋतु का मध्य भाग	मुद्रा, माशा व सैम्बी
वर्षा ऋतु का अंतिम भाग	कुसुम्भा, मसूर, कुलित्था, यव, गौधूमा, कालयाअतसी और सरशपा

वैशाखेवपनंश्रेष्ठंज्येष्ठेतुमध्यमंस्मृतम्।
आषाढेचाधमंप्रोक्तंश्रावणेचाधमाधमम्।।[21]
रोपणार्थंतुबीजानांशुचौवपनमुत्तमम्।
श्रावणेचाधामंप्रोक्तंभाद्रेचैवधमाधमम् ॥[22]
वृषान्तेमिथुनादौचत्रीव्यहानि रजस्वला ।
बीजं न बापयेत्तत्र जन: पापाद्विनश्यति।।[23]

अर्थात् वैशावर (मई) में बुआई सबसे अच्छी बताई गई है, ज्येष्ठ (जून) में बुआई मध्यम और आषाढ़ (जुलाई) में खराब और श्रावण (अगस्त) में सबसे खराब ।

इससे हमें पता चलता है कि रोपाई के लिए गर्म मौसम (अप्रैल-मई) में बीज बोना उत्कृष्ट समय है । श्रावण में बुआई करना अशुभ तथा भाद्रपद (सितम्बर) में सबसे खराब कहा गया । ज्येष्ठ (जेठ) माह का अंत और आषाढ़ का आरम्भ मासिक धर्मकाल हैं । इस अवधि में बीज नहीं बोना चाहिए । अगर किसान इन सभी चीजों को ध्यान में रखकर फसल की रोपाई करता है तो वह नुकसान से बच जाता है ।

ऑर्गेनिक तरीके से कीटनाशक -

ऑर्गेनिक फसल का महत्त्व तो वर्तमान की परिस्थितियों को देखकर हम सब भली-भांति समझते ही हैं।अगर ऑर्गेनिककीटनाशक भी

हम प्रयोग करेंगे तो हम धन की बचत के साथ-साथ स्वास्थ्य लाभ भी कर सकते हैं। इसके साक्ष्य भी हमें उपावनाविनोद में कुछ इस प्रकार से प्राप्त हुए हैं -

करञ्जारग्वधारिष्टसप्तपर्णत्वचा कृत: ।
उपचार: क्रिमिहरोमूत्रमुस्तविडङ्गवान्।।[24]

सिंचाई व खाद -

वैदिक साहित्य से ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में भी कृषि के लिए उत्तम सिंचाई की व्यवस्था थी ।[25] नदी व कूप दोनोंही माध्यम से सिंचाई की जाती थी ।ऋग्वेदआदि के अनेक स्थलों पर अवतशब्द का प्रयोग हुआ है । जिसका अर्थ सिंचाई के प्राकृतिक संसाधनों से न होकर कृत्रिम सिंचाईके साधन कूपों से अर्थ को ग्रहण किया गया है । इससे हमें ज्ञात होता है कि कृत्रिम सिंचाई व्यवस्था कूप इत्यादि द्वारा भी होती थी । वर्तमान समय में भी ऐसी व्यवस्था हमारे उत्तर व दक्षिण भारत में बहुत जगह देखने को मिलती है ।सिंचाई के लिए बनाए गए कृत्रिम कुएं सदा जल से भरे रहते थे ।[26] तथा उनसे पत्थर के पहियों (चक्र) से पानी निकाला जाता था । पानी कों खींचकर लकड़ी की बाल्टियों में भरकर संग्रह किया जाता था ।[27] खेत को अत्यधिक उपजाऊ बनाने के लिए सिंचाई के अलावा खाद का भी उत्तम प्रबंध था ।[28]

फसल से पानी की निकासी -

अगर फसल में अनावश्यक पानी भर जाए तो फसल के लिये नुकसान होगा ।अत: उतना ही पानी होना चाहिए जितना फसल के लिए जरूरी है ।

इसका ज्ञान भी हमारे पूर्वजों से प्राप्त होता है । वैदिक साहित्य में इसके साक्ष्य प्राप्त हुए हैं -

वैरूज़्यार्थंहिधान्यानांजलंभाद्रेविमोचयेत्।
मूलमात्रार्पितंतत्रकारयेत्जलरक्षणम्।।
भाद्रे च जल सम्पूर्णधान्यंविविधबाधकै: ।
प्रपीड़ितकृषणानां न दत्तेफलमुत्तमम्।।[29]

फसल को रोग मुक्त रखने के लिए भाद्रपद (सितंबर) के महीने में खेत से पानी निकाल देना चाहिए । केवलफसल की जडें ही गीली रह सके उतना ही पानी फसल में रखना चाहिए । यदि भाद्रपद (सितंबर) में फसलों को बड़ी मात्रा में पानी दिया जाता है तो वे विभिन्न हानिकारक कारकों से क्षतिग्रस्त हो जाती है, जिससे किसान फसल की अच्छीपैदावर नहीं ले सकते।

हमारे पूर्वज जानते थे कि यदि फसल में ज्यादा पानी भर जाए तो क्या और कैसे पानी की कम करना है। वर्तमान समय में भी उनके द्वारा बताए गए तरीकों को अपनाकर हम अच्छी फसल ले सकते हैं ।

विभिन्न प्रकार की फसल -

यस्याँ समुद्र उत सिंधुरापोयस्यामन्नंकृष्टय:
संबभूवु: ।
यस्यामिदंजिन्वतिप्राणदेजत् सा नो भूमि:
पूर्वपेयेदधातु।।[30]

अर्थात् हमारी जिस मातृभूमि में सागर, महासागर, नद, नदी, नहर, झीलें-तालाब, कुएं इत्यादि जल साधन हैं, जहाँ सब प्रकार के अन्न, शाक, फल आदि अत्यधिक मात्रा में पैदा होते हैं, जिससे सभी प्राणी सुखी हैं, जिसमें कृषक लोग, शिल्पकर्म विशेषज्ञ तथा उद्यमी लोग अत्यधिक संगठित हैं । इस

प्रकार की हमारी पृथ्वी हमें श्रेष्ठभोग्य पदार्थ और ऐश्वर्य प्रदान करने वाली हैं । इस संदर्भ से हमें ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में हमारी संस्कृति बहुत समृद्ध होने के साथ सुव्यवस्थित भी थी । सिंचाई के लिए भिन्न-भिन्न प्रकारों के साथ-साथ कई प्रकार की फसल के साक्ष्य भी इससे प्राप्त हुए हैं । आज भी हम इस ज्ञान को अपनाकर आत्मनिर्भर भारत की तरफ बढ़ सकते हैं और एक भारत श्रेष्ठ भारत का सपना साकार कर सकते हैं । प्रजा का आधार अन्न है ।[31] आज भी हम देखते हैं कि मुलभूत आवश्यकताओं में से प्रमुख आवश्यकता है अन्न (रोटी) । इससे हमें ज्ञात होता है कि जीवन के लिए अत्यावश्यक अन्न को पैदा करने वाली भूमि ही है तभी हमारे पूर्वज भूमि को माता के समानसमझते थे ।प्राचीन काल में विभिन्न प्रकार के अन्नोंकी खेती की जाती थी जो अनाज आज भी उगाए जाते हैं क्योंकि हमारे पूर्वजों से प्राप्त ज्ञान ने इस संदर्भ में हमारा मार्ग पहले से ही प्रशस्त करता है ।वाजसनेयी संहिता 18.12 में ब्रीहि (चावल), यव (जौ), मुद्ग, माष, तिल, अणु, खल्व, गोधूम (गेंहू), नीवार, प्रियन्गु, मसूर और श्यामाक का उल्लेख हुआ है ।बृहदारण्यकउपनिषद् से प्राप्त साक्ष्य से पता चलता है कि दस प्रकार के अन्नों की खेती प्राचीन काल में की जाती थी ।[32]

जो इस प्रकार से हैं- 1. चावल (ब्रीहि) 2. जौ (यवा:) 3. तिल (तिला:) 4. माष (माष:) 5. सरसों 6. राई कोटि के धान्य (अणु-प्रियंगव:) 7. ज्वार (गोधूमा:) 8. ,मसूर (मसूरा:) 9. खल 10. कुल ।

ऐसा लगता है की धान (धान्य) व जौं वैदिक आर्यों के मुख्य खाद्य थे ।[33] आज भी चावल भारत में प्रमुख खाद्य अनाज है ।चावल सम्पूर्ण दक्षिण भारत में अभीष्ट भोजन होने के साथ उत्तर व पूर्व भारत में भी बड़े ही चाव से खाया जाने वाला अन्न है ।वैदिक साहित्य में तंडुल शब्द का उल्लेख बहुत बार मिलता हैं जिसका अर्थ चावल लिया जाता है ।[34]

वैदिक साहित्य से प्राप्त साक्ष्यों से काले व श्वेत प्रकार के चावलों की श्रेणी का ज्ञान होता है।हायन एक विशेषप्रकार का लाल रंग का चावल होता था जो वर्ष भर में पक कर तैयार होता था ।[35 A]

प्लाशकु शीघ्रता से उत्पन्न (अंकुरित) होने वाली चावल की किस्म थी ।[35B] इसे सायण ने 35 दिनों मे पकने वाला बताया है ।[35C]ईख की फसलके साक्ष्य प्राप्त हुए हैं ।[36] इस संदर्भ मेंइसके स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलते कि ईख स्वयं उगता था या इसको बोया या उगाया जाता था।[37]

शतपथब्राह्मण में गुड़ प्राप्त करने हेतु गन्ने की खेती करने का उल्लेख मिलता है ।[38]

गवेधूक एवं नीवारनामक अन्नं का उल्लेख शतपथ में प्राप्त होता है ।अमरकोश में इसे तृणधान्य नाम से कहा है ।[39]

नीवार एक प्रकार का जंगली चावल था तथा गवेधूकके सत्तु की यज्ञ में हवि डाली जाती थी । यह अन्न कोंकण में कसाड या कसा नाम से प्रसिद्ध है ।[40] अन्नों के साथ ही विविध प्रकार के फल भी प्राप्त होते थे ।शतपथ ब्राह्मण में कुवल, कर्कन्ध, बेर, करीर आदि

फलों का वर्णन मिलता है । संहिताओं में भी आमलक, कंध, करीर, न्यग्रोध, बदर, कुर्कवल आदि उपयोगी फलदार वृक्षों के नाम मिलते हैं । इन वृक्षों के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि ये उगाए जाते थे या जंगल में स्वयं उग जाते थे । [41]

कृषि के साधन -

किसी भी कार्य को करने के लिए उसके लिए उपयोगी साधनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है । फसल को उगाने से लेकर फसल को काटने व घर लेकर आने में कई प्रकार के हथियार-औजार प्रयोग में आते हैं ।

वेदों व वैदिक साहित्य से मिले प्रमाणों से हम स्पष्टत: कह सकते हैं कि तात्कालिक समाज में भी कृषि के लिए उपकरणों का प्रयोग किया जाता था जैसा कि वर्तमान काल मे उत्तम कृषि के लिए संसाधनों का प्रयोग हम करते हैं ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे पूर्वजों से प्राप्त ज्ञान के द्वारा ही हमने आज इतनी उन्नति की है ।

शतपथ ब्राह्मण में स्पष्ट उल्लिखित हैं कि हल से फाल द्वारा शुभ रीति से भूमि को जोते और शुभ रीति से कृषक लोग बैल को चलावें।[42]

हल को सीर,शुनासीर तथा लांगलम् कहा गया हैं ।[43] लांगलम्फाल से संयुक्त होता था ।[44]

उस समय हल आकार में इतने बड़े होते थे कि उसमें छः, बारह तथा चौबीस की संख्या तक बैल जोते जाते थे ।[45]

शतपथ ब्राह्मण में 'अनदुही' गौओं को भी हल में जोतने की बात कहीं गयी हैं ।[46]वन्ध्यागौओं को हो सकता है कि इस कार्य के लिए उपर्युक्त समझा जाता हो । हल द्वारा धरती को उर्वरा बनाने के उपरांत वपन क्रिया की जाती थी ।[47] अन्न पक जाने पर हंसिया से लुनाई होती थी ।[48] इसके पश्चात् 'अपस्खल' नामक स्थान पर धान की मुंडाई की जाती थी ।[49]एतरेय ब्राह्मण में खेतों की जुताई का वर्णन आलंकारिक रूप से करते हुए कहा गया है कि जिस प्रकार मंत्री अपने राजा को उचित-अनुचित मंत्रणा देते हैं उसी प्रकार भूमि की जुताई भी दुष्कृष्ट और सुकृष्टभेद से दो प्रकार की होती है ।[50]जुताई के कार्य में बैल, गौओं के अतिरिक्त ऊंट व अश्व आदि का प्रयोग भी किया जाता था ।कौषीतकि ब्राह्मण में जुताई के लिए दो बैलों अथवा अश्वों के प्रयोग का संकेत हैं ।[51] वर्तमान समय में भी इन सभी साधनों का कृषि कार्यों में उपयोग किया जाता हैं ।

निष्कर्ष -

"कृषि विज्ञान" विषय पर मैंने शोध पत्र लिखा है यह विषय बहुत ही विस्तृत है । इस विषय पर शोध-प्रबन्ध लिखा जा सकता है । मैंने तो केवल मुख्य-मुख्य बिन्दुओं पर चर्चा करके कृषि विज्ञान विषय की वर्तमान में प्रासंगिकता के दिग्दर्शन करने का प्रयास किया है । 'कृषि' किसी भी देश की अर्थव्यवस्था को प्रभावित करने वालामुख्य क्षेत्र है । बात तब अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो जाती हैं जब किसी देश की अर्थव्यवस्था कृषि ही प्रधानहो। जी हाँ भारत एक कृषि प्रधान देश है ये हम सब जानते हैं । इसलिए प्रत्येक भारतीय का दायित्व बन जाता है कि वो कृषि-विज्ञान को समझे ।ऐसा करने से हम

सब मिलकरमाननीय प्रधानमंत्री जी का जो नारा व सपना है 'आत्मनिर्भर भारत व एक भारत श्रेष्ठ भारत' उसको पूरा करने में काफी हद तक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा पायेंगे। प्रस्तुत शोध पत्र में भूमि व फसल के प्रकार, उर्वरता बढ़ाने के उपाय, सिंचाई की विधियाँ, आर्गेनिक खाद व अन्न के प्रकार व उसका संरक्षण व रख-रखाव, कृषि कार्य में प्रयोग होने वाले उपकरण व पशु इत्यादि पर विस्तृत चर्चा की है । जो वैदिक ज्ञान हमारे पूर्वजों ने हमें वैदिक साहित्य के माध्यम से नूतन पीढ़ी तक ज्ञान पहुँचाने का जो अथक परिश्रम किया है उसके लिए हमें हमेशा उनका ऋणी रहना चाहिए। अगर हम वैदिक कृषि विज्ञान को अपनाते है तो हमें सही समय पर बीजारोपण का ज्ञान भी होगा व फसल के खरपतवार को दूर करने की सरल व किफायती विधि का भी पता चलेगा । जिससे लाभ उठाकर हम अपने धन व श्रम की बचत कर सकते हैं ।ऑर्गेनिक खाद का प्रयोग फसल की पैदावार बढ़ाने के लिए यदि हम करेंगे तो हमें आर्थिक लाभ के साथ-साथ स्वास्थ्य लाभ भी मिलेगा क्योंकि एक कहावत भी है कि जैसा खाये अन्न वैसा होवे मन । मन में विचार उत्पन्न होते हैं और यही विचार हमें कर्मशील बनाते है यदि किसी के विचार अच्छे होंगे तो वह व्यक्ति निश्चित तौर पर अपनी उन्नति व मानव कल्याण की भावना लेकर आगे बढ़ेगा । ऐसा करने से राष्ट्र में समृद्धि व उन्नति होगी । विज्ञान को वरदान कहा जाता है यदि कृषि के क्षेत्र में भी वैदिक विज्ञान को हम अपनाते है तो जो युवकों या समाज के वर्तमान दृष्टिकोण में कृषि कार्य हीन या तुच्छ कार्य माना जाने लगा है उस दृष्टिकोण में बदलाव हो सकता है । यदि फसल अच्छी होगी तो कृषकों को लाभ होगा और वे कृषि-कार्य से कभी विमुख नहीं होंगे । मध्य-प्रदेश के किसान का उदहारण इसके लिएहम सब देख सकते हैं कि वहाँ के एक किसान ने आम का बाग़ लगाया और अपने बाग में विशेष प्रकार की किस्म के पौधे रोपण किए ।ऐसा करने से उस किसान को अंतर्राष्ट्रीय बाजार से बहुत ज्यादा लाभ प्राप्त हुआ । ये कृषि-विज्ञान हमारा अपनाविज्ञान है जिसे समझकर दूसरे देश फायदा ले रहे हैं ।अत: प्रत्येक भारतीय का नैतिक दायित्व बनता हैं कि वो वैदिक ज्ञान को समझे और जिस- भी कृषि के विभिन्न प्रकार के क्षेत्र में व्यक्ति कार्य करना चाहता है वहाँ वो अपने वैदिक-ज्ञान को प्रयोग करें जिससे शानदार परिणाम प्राप्त होंगें। अभी हम देख ही रहे हैं कि यू.जी.सी. के नएदिशानिर्देशानुसार सभी विषयों के पाठ्यक्रमों का निर्माण भारतीय ज्ञान-परम्परा के संदर्भ को समझते हुए ही बनानाहोगा । ऐसा करने से हमारी सोचने-समझने की शक्ति निश्चित तौर पर बढ़ेगी व राष्ट्र उन्नति के पथ पर निरंतर अग्रसारित होगा ।इससे जो युवाओं में बेरोजगारी बढ़ी हुई है जिसके कारण वोविसंगतियों में फंस गए हैं । जैसे- जुआ, मद्यपान या मनोरोगीइत्यादि हो गए हैं । यदि युवाओं को रोजगार मिलेगा तो वोनिश्छित रूप से कृषि क्षेत्र में निहित बेरोजगारी को प्रस्तुत शोध पत्र में बताए गए

कृषि क्षेत्र में वैज्ञानिकता के उपायों को अपनाकर हम सब दूर कर सकते हैं । इन सबबुराईयोंसे हमें छुटकारा पा सकते हैं ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. ऋग्वेद,1.52.11
2. अथर्ववेद, 8.10.24
3. ऋग्वेद संहिता, 1.112.16
4. अथर्ववेद ,12.1.12
5. अथर्ववेद , 4.15.8,14
6. ऋग्वेद, 10.34.13
7. ऋग्.10.34.3 अक्षेर्मा दिव्य:,कृषिमित्कृषव
8. वैदिक साहित्य और संस्कृति, वाचस्पतिगैरोला, चौरवम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान
9. ऋग्वेद (8/6/48) , अथर्ववेद (6.91.1)
10. ऋग्वेद 10.90.6, यजुर्वेद 31.14
11. सामवेद, पुर्वार्चिक 6.4.2
12. अथर्ववेद , 12.1.45
13. अथर्ववेद ,7.52.8
14. साईंस इन संस्कृत, संस्कृत भारती, नई दिल्ली, पृष्ठ 121, अथर्ववेद 7.52.8
15. साईंस इन संस्कृत, संस्कृत भारती, नई दिल्ली पृ. 115, कृषि पराशर189
16. वही
17. अर्थशास्त्र, 2.24
18. साईंस इन संस्कृत, संस्कृत भारती नई दिल्ली पृ. 114
19. साईंस इन संस्कृत, संस्कृत भारती नई दिल्ली पृ. 113
20. कृषि पराशर 168
21. कृषि पराशर 169
22. कृषि पराशर 175
23. साईंस इन संस्कृत, संस्कृत भारती नई दिल्ली पृ. 107
24. ऋग्वेद, 7.48.2, अथर्ववेद , 1.6.4,18.2.2
25. ऋग्वेद, 10.10.16
26. ऋग्वेद, 10.101.7
27. अथर्ववेद , 2.14.3,4 आदि
28. साईंस इन संस्कृत, संस्कृत भारती नई दिल्ली पृ. 120
29. अथर्ववेद , भूमि सूक्त, 12.1.3
30. शतपथ ब्राह्मण, 6.7.3.7,अन्नं वैविश:

31. बृहदारण्यकउपनिषद्, 6.3.22
32. ऋग्वेद, 11.33.15
33. अथर्ववेद , 10.9.26, मैत्रायणी संहिता, 2.6.6, काठक संहिता, 10.1, ऐतरेय ब्राह्मण,1.1, शतपथ ब्राह्मण, 1.1.4.3, छान्दोग्यउपनिषद् 3.14.3
34. तैतिरीय संहिता, 1.8.10.1
    A. संवत्सरपक्वाग्रीहयःपाणिनी, 3.1.1481 संवत्सरंपक्वानांरक्ताशालीनांहायना: ।सायण- शतपथ, 5.3.3.6
    B. तै.सं, 1.8.10 में प्लाशुक के स्थान पर आशु शब्द का प्रयोग मिलता है ।
    C. श.ब्रा. 5.3.3.2 की सायणटीका, ततोऽप्याधिककाले पक्ष त्रयेपच्यमाना: षष्टिकाग्रीहयःआशवः।
35. अथर्ववेद ,1.34.5, मैत्रायणी संहिता,3.7.9,4.2.9, वाजसनेयी संहिता ,25.1
36. वैदिक साहित्य और संस्कृत, वाचस्पतिगैरोला, चौरबम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान दिल्ली
37. श.ब्रा.,5.3.3.8 सायण टीका
38. अमर कोश, 215.25
39. ब्राह्मण ग्रंथों के राजनीतिक सिद्धांत, प्रो.आचार्यबलवीर, पृ. 153
40. वही
41. श. ब्रा.,7.2.2.9-20
42. वही,7.2.2.6,2.6.3.2
43. लांगलमयिमत्, वही, 7.2.2.11
44. वही,7.2.2.6,षड्गवंभवति, द्वादश गवंवा, चतुर्विंशतिगवंवा।
45. श. ब्रा.,5.2.4.13
46. वही, 7.2.2.4
47. वही, 7.2.2.5- यदा वाडत्रंपच्यतेअथ तत् सृण्योपचरन्ति।
48. वही, 1.7.3.26
49. ऐ. ब्रा. 13.14- यथा दुष्कृतंदुर्मतिकृतंसुकृष्टं सुमति कृतम्।
50. कौ. ब्रा., 26.8- शास्याय यद्यपि प्रात: सवनेयुज्येताम्।

संदर्भ पुस्तक सूची :-

1. वैदिक दर्शन, पद्मश्री डॉ. कपिलदेवद्विवेदी, विश्वभारती अनुसंधान परिषद्ज्ञानपुर,भदोही,द्वितीय संस्करण 2006 ई.
2. साईंस इन संस्कृत, संस्कृत भारती, नई दिल्ली
3. वैदिक साहित्य और संस्कृति का समीक्षात्मक इतिहास, ओमप्रकाशपाण्डेय, न्यूएज इंटरनेशनल (प्रा.) लिमिटेड,पब्लिशर्स, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2010
4. संस्कृत शास्त्रों का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौरवम्बाविद्याभवन, वाराणसी, संस्करण 2019 ई.
5. वैदिक वाङ्मयस्येतिहास:, आचार्य जगदीश चन्द्र मिश्र:, चौरवम्बासुभारती प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण 2018

6. वेद-विभा, डॉ. देवी सहाय पाण्डेय 'दीप', चौरवम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, द्वितीय संशोधित संस्करण 2015
7. वैदिक साहित्य और संस्कृति, वाचस्पतिगैरोला, चौरवम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, पुनर्मुद्रित संस्करण 2013